संपादक की ओर से

स्त्री विमर्श आज एक खास मुकाम पर पहुँच गया है, उसके आगे और कई चरण बाकी हैं। लंबे अर्से से स्त्री मुक्ति संघर्ष चलता आ रहा है, कई तरह के व्यवधानों, बाधाओं का सामना करते हुए वह आज भी आगे बढ़ रहा है। मुक्ति संघर्ष की नियति यही है कि जब वह अपने संघर्ष से पीछे हटता है, या थोड़ा ढीला होता है तब विरोधी शक्तियाँ एवं शोषक इस पर झपट पडते हैं। इससे वाकिफ स्त्री हमेशा सावधान रहती है, और अपना संघर्ष जारी रखती है, उससे पीछे मुड़ने की सोचती तक नहीं है। राजनीति, पूंजी, धर्म आदि का बागडोर अनादिकाल से पुरुष के हाथ में है और संस्कृति का अधिपति भी वही है। इसलिए इतिहास में ही नहीं, बल्कि वर्तमान में भी स्त्री उसके चंगुल से पूर्ण रूप से आज़ाद नहीं हुई है, पूर्ण आज़ादी भी उतना निकट नहीं दिखाई देती है। शिक्षा के क्षेत्र में स्त्री कई कदम आगे आ गयी है, पर धर्मभीरू भारतीय समाज में स्त्री धर्म एवं उसके आचार-अनुष्ठान से मुक्त नहीं हुई है, वर्तमान माहौल में उसके बन्धन से स्त्री की मुक्ति सबसे कठिन लगता भी है। पूंजी की स्थिति भी लगभग इसी तरह की है, किन्तु कानून एक हद तक स्त्री की सहायता करता रहता है। शिक्षित एवं नौकरी पेशा स्त्री आर्थिक आत्मनिर्भर होने का कदम बढ़ा रही है, जिसके बिना स्त्री मुक्ति का स्वप्न कभी भी यथार्थ में नहीं बदलेगा। राजनीति के क्षेत्र में आरक्षण लागू करने के बाद भी खास परिवर्तन नहीं दिखाई देता है। क्योंकि राजनीति व सत्ता पर स्त्री को स्थान देना पुरुष के वर्चस्व पर गंभीर आघात होगा। ऐसी आबोहवा में रूपायित संस्कृति पर पुरुष-वर्चस्व का होना स्वाभाविक है। यही वर्तमान समाज का यथार्थ है। मानवाधिकार की बातें पुरुष भी करता है, पर वह व्यवहार में उसके खिलाफ खड़ा रहता है। वह भाषण तो देता रहता है, पर आत्मशोध करने को भूल जाता है, और घर-परिवार पहुँचते ही अपने भीतर कुंडली मारकर बैठी प्रभुता जाग उठती है। बिना आत्मशोध की हमदर्दी व सहानुभूति बकवास मात्र रह जाती है। इसलिए स्त्री मुक्ति जैसे गंभीर मुद्दे को पुरुष को भी गंभीरता के साथ लेना चाहिए। कहने का मतलब यह है कि पुरुष को अपनी परम्परागत मानसिकता को, अहंग्रस्तता को छोड़कर बाहर आना चाहिए और मुक्त भाव से स्त्री को अपने समान मनुष्य है इसे स्वीकार करना चाहिए।

भारतीय इतिहास में मध्यकाल की मीराबाई, अक्का महादेवी, ललद, आंडाल और बाद में रमाबाई, रुक्मा बाई, सावित्रीबाई फुले से लेकर कुछ नाम देख सकते हैं। लेकिन भारत में, स्त्री की स्थिति को बदलने के लिए इनका प्रयत्न काफी नहीं रहा। सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में पश्चिमी शिक्षा एवं संपर्क, आर्य समाज, ब्रह्म समाज, स्वतंत्रता आन्दोलन आदि के कारण समाज में थोड़ा परिवर्तन अवश्य हुआ था। साहित्य के क्षेत्र में सुभद्राकुमारी चौहान और महादेवी वर्मा से लेकर कई लेखिकाओं ने इस मुक्ति संघर्ष के लिए अपना-अपना योगदान दिया है और आज भी कई लेखिकायें एवं कार्यकर्त्तायें अपनी भूमिका निभा रही हैं। आज पारिस्थितिक स्त्रीवाद इसे और मज़बूत बना रहा है। इस सामाजिक-सांस्कृतिक कार्यक्रम को आगे बढ़ाकर स्त्री-पुरुष दोनों को मानवीय चेहरा प्रदान करने के अभियान में 'जन विकल्प' का प्रस्तुत स्त्री अंक, 'विकल्प, तृश्शूर' का एक कदम मात्र है।

पी. रवि

अनुक्रम

संपादकीय		
सामाजिक संरचना के असामंजस्य ...	सुधा अरोड़ा	8
स्त्री विमर्श : विवेक और विभ्रम	मुक्ता	32
स्त्री विमर्श : अस्मिता का सवाल	मनोज पाण्डेय	42
पितृसत्ता और स्त्री	परषोत्तम कुमार	49
स्त्री-विमर्श की दृष्टि में हिन्दी व्याकरण की सृष्टि	माया पी.	53
सुधा अरोड़ा से निर्मला डोसी की बातचीत	सुधा अरोड़ा	58
समकालीन स्त्री कविता : संघर्ष चेतना	के.के. वेलायुधन	72
स्त्री चिंतन का नया स्वर : हरप्रीत कौर की कविताएँ	बीरपाल सिंह यादव	81
सुशीला टाकभौरे की कविता में दलित जीवन की तिलमिलाहट	प्रिया ए.	86
दलित साहित्य के परिप्रेक्ष्य में नारी चिंतन	समद कोडूर	91
पितृसत्ता का दंश और बुत बनी औरतें : तीन कहानियाँ	ओम प्रकाश मिश्र	95
हिन्दी एवं मलयालम के महिला कहानीकारों की कहानियों में पारिस्थितिक स्त्रीवाद	हेमा जी.	111
परिधि पर लड़कियाँ	प्रीति सागर	118
स्त्री लेखन की स्त्री अस्मिता	शरण्या टी.एस.	124
बदलाव के स्वप्न और कोशिश में : अनामिका के दो उपन्यास	तरसेम गुजराल	128
नयी स्त्री चेतना का उद्‌घोष : प्रभा खेतान का रचना कर्म	अजित्त.एस.भरतन	139
'भूमिका' : सिनेमा की भाषा में	विजय शर्मा	142
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों में स्त्री-जागृति की नयी लहर	पी.गीता	150
हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ	सरजूप्रसाद मिश्र	156
उपन्यास अंश : 'शायद कुछ हो जाए ....'	मधु कांकरिया	163